RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-03
Issue-02
February-2018

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com [UGC Listed Journal]

भारत में संगीत कला का संरक्षण व संवर्द्धन

डॉ0 नंन्दिनी मुखर्जी

एसोसिएट प्रोफेसर संगीत वादन (तबला) जगत तारन गर्ल्स डिग्री कालेज प्रयागराज

सृष्टि के प्रारम्भ से ही संगीत का अस्तित्व है इसलिए संगीत का स्थान साहित्य व कला से पहले है। संगीत में भाव सम्प्रेक्षण की अद्भुत शक्ति है। मनुष्य ने सुख–दुख के पलों में जैसा अनुभव किया और जो प्रतिक्रिया व्यक्त की वही संगीत के स्वरों में ढलती गई जिसे धीरे–धीरे तालबद्ध रूप मिलता चला गया, जिससे मानव के हृदयगत सद्भव जन कल्याणकारी बन जाते हैं।

संगीत तथा धर्म प्राचीन आदिमकाल से समकालीन आधुनिक काल तक समय के साथ बदलते रहे हैं। बदलते समय के साथ वे इतने परिवर्तित हो चुके हैं कि इनका मौलिक रूप काफी पीछे रह गया है और आधुनिक समाज की आवश्यकताओं के अनुरूप ढल चुके हैं। ये इतने परिवर्तित हो चुके हैं कि इनको अति प्राचीन संगीत के स्वरूप में पहचानना भी दुरूह है। संरक्षित संगीत का अभाव यह प्रमुख कारण है जिसके परिणाम स्वरूप तत्कालिक संगीत को परिभाषित या निर्धारित नहीं किया जा सकता जैसा वह भूतकाल में था।''[1]

संगीत की अविरल धारा प्रकृति तथा चराचर जगत में सदियों से वर्तमान तक समाहित तथा प्रवाहित है। सभ्यता के सभी चरणों में संगीत की स्वर लहरी किसी न किसी रूप में अवश्य विद्यमान रही है। जिससे उसकी प्राचीनता स्पष्ट हो जाती है। मानव प्रयत्नों द्वारा संगीत कला विभिन्न युगों में उत्तरोत्तर विकसित होती गयी।

प्राचीन काल में संगीत की साधना स्वान्तः सुखाय हेतु की जाती थी, क्योंकि उस समय संगीत कला का उद्देश्य था आत्मानन्द एवं उसके माध्यम से मोक्ष प्राप्ति। संगीत को धर्म, दर्शन, चिन्तन एवं योग से समन्वित कर संगीत साधक इस कला को आध्यात्मिक उन्नति का सशक्त माध्यम मानते थे। उस समय संगीत साधक संयमित जीवन व्यतीत करते हुए पूर्णलगन एवं धैर्य से संगीत की साधना में रत रहते थे तथा उनका सम्पूर्ण जीवन संगीत कला के उत्कर्ष एवं उसको संरक्षित रखने हेतु समर्पित था। प्राचीनकाल में उद्योग आधुनिक काल की भाँति तकनीकी सुविधाओं से युक्त नहीं थे। संगीत भी उस समय उद्योग के रूप में विकसित नहीं था। उस समय संगीत के क्रियात्मक स्वरूप के संरक्षण, संवर्धन एवं प्रचार–प्रसार का कोई साधन उपकरण या माध्यम उपलब्ध नहीं था जिससे कलाकारों की कला को जीवित रखा जा सके संगीत के प्रचार–प्रसार एवं संवर्धन का माध्यम पूर्णरूपेण मौखिक था। मंच प्रदर्शन के समय उपस्थित कुछ विशेष श्रोताओं तक ही यह कला पहुँच पाती थी तथा संगीत सभाओं को ही प्रचार–प्रसार का माध्यम माना जाता था।'' उस समय संसाधन न होने के कारण किसी भी कलाकार की, प्रस्तुति में दुबारा उस कलाकार द्वारा स्वयं मंच पर उपस्थित होकर प्रस्तुत करने पर ही सुना जा सकता था।

हमारे देश में प्राचीनकाल से लेकर आज तक अनेक संगीतज्ञों एवं शास्त्रकारों ने समय–समय पर जो अनेक ग्रन्थ लिखे वो हमारी युग युगीन परम्पराओं और सांगीतिक निधि को सुरक्षित रखने का एक महत्वपूर्ण साधन है। प्रत्येक युग के ग्रन्थों के महत्व को न केवल उसी युग में अपितु आगामी युग में भी मार्ग दर्शन के लिये स्वीकार गया है। आधुनिक युग में पं0 विष्णुदिगम्बर पलुस्कर जी तथा विष्णु नारायण भातखण्डे जी ने शास्त्रीय संगीत के संरक्षण हेतु बहुत ही महत्त्वपूर्ण कार्य किया। स्वरलिपि पद्धति ताल लिपि पद्धति की रचना करके संगीत की जन सुलभ मनाया। इन्होंने संगीत की उन्नति हेतु देश के कोने कोने में शास्त्रीय संगीत का प्रचार किया। सन् 1908 में गन्धर्व महाविद्यालय की स्थापना की तथा संगीत सम्बन्धी विभिन्न पुस्तकों का लेखन किया।

स्वतन्त्रता की पश्चात सास्कृतिक विकास के प्रति जनसाधारण में जागरूकता उत्पन्न हुई और सरकार ने यह दायित्व स्वीकार किया कि महाविद्यालय स्तर पर भारतीय कलाओ व संस्कृति के विकास में प्रयत्न किये जाये। अतः सरकार द्वारा विभिन्न प्रयासों के परिणाम स्वरूप संगीत विषय को माध्यमिक शिक्षा के पाठयक्रम में अन्य विषयों के समान मान्यता प्राप्त हो गयी तथा धीरे–धीरे या विषय स्नातक व स्नातकोत्तर कक्षाओ में भी पढ़ाया जाने लगा। सरकारी, गैर सरकारी संस्थानों द्वारा संगीत के विकास के लिये बहुत प्रयास किया गया। संगीत सम्मेलन का आयोजन किया गया तथा सगीत कला के प्रोत्साहन हेतु कुशल संगीतज्ञों को राष्ट्रपति पदक प्रदान करना आरम्भ किया गया व अन्य पुरस्कार व मान पत्र भेंट किया जाने लगा। सन 1953 में संगीत नाटक अकादमी। 1954 में ललितकला अकादमी की स्थापना की गई। आकाशवाणी के विभिन्न केन्द्रों पर शास्त्रीय संगीत के प्रचार प्रसार के लिये विभिन्न संस्थाओ द्वारा कार्यशाला, संगीत सम्मेलन में संगोष्ठियों का आयोजन किया जाता है।

वैज्ञानिक उपकरणों के आविष्कार से संगीत के प्रयोगात्मक पक्ष व शास्त्रीय पक्ष दोनों को जन मानस तक आसानी से पहुँचाया जा सकता है। मुद्रण यंत्रों के आविष्कार

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

से संगीत की पुस्तकों, पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ जिससे संगीत का क्रियात्मक व शास्त्र दोनों समृद्ध हआ है। ग्रामोफोन का आविष्कार हुआ, जिसके द्वारा कलाकार की कला को सुरक्षित रखा जा सकता है तथा जन मानस को भी उपलब्ध कराया जा सकता है। टेपरिकार्डर की सुविधा उपलब्ध होने से कलाकार के कार्यक्रम को आसानी से रिकार्ड करके सुरक्षित रखा जाने लगा तथा इनके कैसेट बना के विभिन्न कम्पनियाँ जन मानस को उपलब्ध करा रही है जिससे संगीत जो कुछ समय पूर्व कुछ लोगों तक ही सीमित था आज उपकरणों के माध्यम से जन सामान्य को आसानी से उपलब्ध है। संगीत के सम्वर्द्धन में आकाशवाणी व दूरदर्शन का भी बहुत योगदान है जिसके द्वारा शास्त्रीय संगीत, लोक संगीत सुगम संगीत तथा विभिन्न प्रान्तों में लोक गीतों का व दूरदर्शन पर लोक नृत्यों का प्रसारण होता है। तथा उन कलाकारों का कैसेट व वीडियो फिल्म बना कर संग्रहीत कर लिया जाता है और समय–समय पर उनका प्रसारित किया जाता है।

शास्त्रीय संगीत के बहुत से कलाकारों ने जैसे भीमसेन जोशी किशोरी अमोनकर पं0 शिव कुमार शर्मा, हरि प्रसाद चौरसिया, पं0 रविशंकर, गुदई महराज, अल्ला रक्खा खॉ, गोपी कृष्ण, बिरजू महराज आदि ने अनगिनत फिल्मों में शास्त्रीय संगीत देवर फिल्म संगीत की उन्नति किया है। तथा फिल्म इंडस्ट्री ने हमारे कलाकारों को भी संरक्षण प्रदान किया है जिससे वे कला का प्रचार–प्रसार कर शास्त्रीय संगीत के स्तर को ऊँचा और समृद्ध करने में अपना योगदान दे सकें।''[2]

भारत वर्ष का लोक संगीत भी बहुत समृद्ध है। यहाँ जन्म से लेकर मृत्यु तक के सभी संस्कारों के लोक गीतों का विशाल भण्डार है। सभी प्रान्तों के लोकगीत भी उनकी भाषा व रहन–सहन के अनुसार भिन्न–भिन्न है। विभिन्न मांगलिक अवसरों पर इन गीतों को परिवार की महिलाओं द्वारा गाया जाता था ये जीवन के हिस्से में थे इससे संगीत के प्रति जुड़ाव बना रहता है। जिनकी रूचि इतनी नहीं है कि संगीत महफिलों में जाये संगीत के कार्यक्रमों को सुने वो भी इस तरह संगीत से जुड़े रहते थे। परन्तु आज उस तरह के लोक संगीत का प्रचलन कम होता जा रहा है। विवाह आदि मांगलिक अवसरों पर होने वाले गीत जिसे आज लेड़ीज संगीत कहा जाता है। उसका स्वरूप ही परिवर्तित हो गया है। इन पारम्परिक लोक संगीतों का प्रयोग कम होने से उनके साथ प्रयोग किये जाने वाले वाद्यों का प्रयोग भी कम होता जा रहा। इनके संरक्षण हेतु समय–समय पर कार्यशाला आयोजित की जानी चाहिये जिससे लोक कलाएं लुप्त न हो जाये।

मुझे अपने शोध कार्य के दौरान नक्कारा वाद्य के वर्णों के विषय में जानकारी प्राप्त करना था कि इस पर किन वर्णों का का प्रयोग किया जाता है। मैंने कई नक्कारा वादकों से सम्पर्क किया वो अच्छे कलाकार हैं पर वो ये नहीं बता पा रहे थे कि वो क्या बजाते हैं वो सुन कर बजाने लगे उनको नहीं मालुम कि क्या बजता है। कार्यशालाओं के द्वारा इस प्रकार के वाद्यों के विकास में भी अवश्य ही मदद मिलेगी।

संगीत आपसी सौहार्द बनाने का भी एक सशक्त माध्यम है। आज समाज में विघटन हो रहा है। आपस में शंका, टकराव बढ़ता जा रहा है। संगीत एक सम्मिलित परम्परा का प्रतीक है। इसमें सभी वर्ग तथा सभी सम्प्रदाय के लोग रहते हैं। अमीर–गरीब व जाति का भेद भाव नहीं है। सब का सम्मिलित कल्चर है। अलग धर्म के शिष्य अलग धर्म के गुरू के सामने नतमस्तक हुए हैं। इसका एक उदाहरण उस्ताद फैज मुहम्मद व उनके शिष्य भास्कर बुआ हैं एक दिन उस्ताद फैज मुहम्मद ने भास्कर बुआ को बुला कर कहा आज मुझे गोश्त खाने की बड़ी ख्वाहिश हो रही है। भास्कर बुआ गोश्त खरीद कर लाये जबकि वो प्याज लहसुन भी नहीं खाते थे फिर उनके गुरू ने उनको बनाना सिखाया भास्कर बुआ ने धैर्य के साथ उनके हुक्म की तामील की, खॉ साहब ने खाने के बाद कहा कि में तो तुम्हारी गुरू भक्ति की परीक्षा ले रहा था मैं तुझे दिल खोलकर दुआ देता हूँ।[3] इस तरह के गुरू भक्ति के बहुत से उदाहरण हैं जिसके धर्म का बन्धन नहीं है। अतः संगीत के द्वारा सामाजिक विघटन को भी कुछ हद तक बचाया जा सकता है। जो व्यक्ति संगीत में लीन हो जाता है वो ईश्वर में लीन हो जाता है उसको सांसारिक मोह माया नहीं रहती इसका उदाहरण अब्दुल करीम खॉ साहब का है। वो मद्रास गायन समाज के बुलाने पर जा रहे थे रास्ते में तबियत बिगड़ गयी उन्होंने शागिर्द से डॉ0 बुलाने को नहीं कहा वो समझ गये कि बुलावा आ गया है। रास्ते में एक छोटे स्टेशन पर उतरे और शागिर्द से कहा दरी बिछाओं तानपुरा मिलाओ मेरा आखिरी वक्त आ गया है। इतना कह कर उन्होंने मक्का की तरफ मुंह करके खुदा को याद करके सुर लगाया और गाना शुरू कर दिया।[4] इसके सम्वर्धना की आवश्यकता इसीलिये हुई कि उन्होंने कला के क्षेत्र में जो जीवन जिया है उसी को आदर्श माने।

पिछले 150 वर्ष पहले के संगीतज्ञों की जीवनी पर एक डाक्यूमेन्ट्री फिल्म बनायी जानी चाहिये कि उन कलाकारों का क्या जीवन रहा है किन–किन कठिनाईयों के बाद कला को प्राप्त किया है ऐसे कलाकार हैं जिनका जीवन मार्मिक है उनका जीवन ही कला है। उनके जीवन को प्रतीक रूप में दिखाया जाय तो आगे आने वाली पीढ़ी पर निश्चित रूप से प्रभाव पड़ेगा। इस तरह के डाक्यूमेन्ट्री फिल्मों का अलग ही आकर्षण होता है।

शास्त्रीय संगीत के लिये विलायत खॉ साहब ने कहा था कि शास्त्रीय संगीत पहले भी था आज भी है और कल भी रहेगा। यह लुप्त होने का नहीं है बात यह कि कैसे बना रहेगा। अतीत से मैंने जो पाया है उसी को और फैलाकर विस्तार देकर भविष्य के हाथों जब तक न पहुँचा लूँ तब तक मेरा कार्य पूरा नहीं होगा। इतने बड़े घराने का भी यही तो दायित्व है कि उसकी गतिशीलता बनी है। अगर परम्परा को बचाना है तो उसके लिये भी व्यक्तिगत प्रतिभा की जरूरत है।

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

पारम्परिक संगीत व शिक्षण संस्थाओं द्वारा प्रदत्त शिक्षा को व्यक्तिगत प्रतिमा के आधार पर शासन के सहयोग से तथा संगीत प्रेमियों के सहयोग से सम्वर्धित किया जा सकता है व उसके भावी पीढ़ी को प्रेषित किया जा सकता है।

सन्दर्भ सूची–

1. शर्मा डा0 भारती, सांगीतिक एवं धार्मिक परम्परा एक अवलोकन, पृ0सं0 21
2. शर्मा डा0 राधिका, भारतीय संगीत को मीडिया और संस्थानों का योगदान, रोशन ऑफसेट प्रेस, पृ0सं0 288
3. मुखर्जी कुमार प्रसाद, कुदरत रग बिरंगी, राज कमल प्रकाशन नई दिल्ली, पृ0सं0 24–25
4. मुखर्जी कुमार प्रसाद, कुदरत रग बिरंगी, राज कमल प्रकाशन नई दिल्ली, 261

संदर्भ ग्रन्थ–

1. शर्मा प्रो0 स्वतन्त्र– सौन्दर्य, रस एवं संगीत अनुभव पब्लिशिंग हाउस इलाहाबाद–2010
2. जौहरी सीमा, संगीतमय, राधा नई दिल्ली पब्लिकेशन्स, 2003
3. शर्मा डा0 राधिका, भारतीय संगीत को मीडिया और संस्थानों का योगदान, रोशन ऑफसेट प्रेस, 2010
4. मुखर्जी कुमार प्रसाद, कुदरत रग बिरंगी, राज कमल प्रकाशन नई दिल्ली, 2002
5. शर्मा डा0 भारती, सांगीतिक एवं धार्मिक परम्परा एक अवलोकन
6. शर्मा प्रो0 स्वतन्त्र, भारतीय संगीत एक ऐतिहासिक विश्लेषण, अनुभव पब्लिशिंग हाउस इलाहाबाद 2014

© RRIJM 2015, All Rights Reserved